# शाहू छत्रपति

समाज परिवर्तन के नायक

प्रो. डॉ. विमलकीर्ति

# शाहू छत्रपति

## समाज परिवर्तन के नायक

प्रो. डॉ. विमलकीर्ति

# सामाजिक क्रान्तिकारी राजा : शाहू छत्रपति

महाराष्ट्र के ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण देश के आधुनिक इतिहास में जिनका नाम सामाजिक क्रान्तिकारी राजा के रूप में जाना जाता है, जो आज भी देश में चल रहे सामाजिक परिवर्तनों के आन्दोलनों की प्रेरणा हैं, जो देश के दलितों, पिछड़ी जातियों, और जाति तथा धर्म के नाम पर मानवी अधिकारों से वंचित रखे गये लोगों की प्रेरणा हैं उन शाहू छत्रपति का जीवन और सामाजिक कार्य आज भी महत्त्वपूर्ण है।

हमारे देश में सामन्तशाही, राजशाही, राजे-रजवाड़ों का सामाजिक इतिहास बहुत अच्छा और गर्व करने लायक नहीं है। आधुनिक काल में हमारे देश में सामन्तों, राजे-रजवाड़ों, रियासतदारों की कमी नहीं थी। सभी राजे-रजवाड़े अंग्रेजों की मेहरबानी पर राजसत्ता चला रहे थे। वे इस देश की जनता पर राज कर रहे थे और वे इस देश की समाज व्यवस्था से, इस देश की जातिभेद की व्यवस्था से, अछूतपन की व्यवस्था से, यहाँ की ब्राह्मण-पण्डा-पुरोहितशाही से अच्छी तरह परिचित थे।

भारत की जातिभेद की, ब्राह्मण जाति वर्चस्व की समस्या भारत के किसी एक प्रान्त या रियासत की समस्या नहीं थी। बल्कि वह सम्पूर्ण भारत के मैदानी प्रदेशों की, प्रान्तों की समस्या थी और आज भी है। लेकिन तत्कालीन भारत के किसी भी राजा ने, रियासतदार ने इस समस्या की अमानवीयता को अच्छी तरह जानते हुए भी जान-बूझकर इस समस्या की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। बल्कि वे ब्राह्मणवाद को बढ़ावा देने के लिए, पण्डा-पुरोहितशाही को बढ़ावा देने के लिए, जातिवाद और अछूतपन को बरकरार रखने के लिए पूरी कोशिश करते रहे। लेकिन आधुनिक भारत में करवीर संस्थान कोल्हापुर के शाहू छत्रपति एक ऐसे राजा थे जिन्होंने अपनी रियासत में अपने सामाजिक क्रान्ति के, सामाजिक परिवर्तन के एजेण्डे को लागू किया था। आधुनिक भारत के इतिहास में शायद ही कोई इस तरह का राजा हुआ है। आज के लोकतन्त्र में राजा अपने राजमहलों से, राजवैभव से आम जनता में पूजित नहीं होता है। आज राजमहलों वाले, राजवैभवों वाले राजाओं का कोई नामलेवा भी नहीं रहा है।

लेकिन आज भी इस लोकतान्त्रिक भारत में भी शाहू छत्रपति का नाम बड़े सम्मान के साथ लेनेवालों की कोई कमी नहीं है। शाहू छत्रपति किसी बड़ी रियासत के राजा भी नहीं थे। महाराष्ट्र में ब्रिटिश शासनकाल में करवीर कोल्हापुर एक छोटी-सी रियासत थी। उस रियासत की सत्ता शाहू छत्रपति ने दिनांक 2 अप्रैल, 1894 में अपने हाथों में ली। उस समय उनकी आयु केवल बीस साल की थी। शाहू छत्रपति के लिए कोल्हापुर रियासत की सत्ता अपने हाथों में लेना महाराष्ट्र के ही नहीं बल्कि देश के इतिहास में एक क्रान्तिकारी घटना साबित हुई। जैसे पूरे देश में जातिवाद, अछूतपन का बोलबाला था उसी प्रकार कोल्हापुर रियासत में भी था।

उस समय सम्पूर्ण भारत जातिभेद, अछूतपन की अमानवीय व्यवस्था से पीड़ित था। जब

शाहू छत्रपति ने कोल्हापुर रियासत की सत्ता अपने हाथों में सँभाली उस समय उनको विरासत के तौर पर ढेरों समस्याएँ भी मिलीं।

कोल्हापुर रियासत के शासन - प्रशासन पर अंग्रेज, पारसी और ब्राह्मण अधिकारियों का तो प्रभुत्व था ही साथ ही साथ कोल्हापुर के महाराजा की निजी सेवा में भी उन्हीं का प्रभुत्व था। शाहू छत्रपति से पहले कोल्हापुर रियासत के शासन-प्रशासन में गैर-ब्राह्मणों के लिए कोई विशेष स्थान नहीं था।

शाहू छत्रपति ने इस सामाजिक व राजनीतिक स्थिति को अच्छी तरह अनुभव किया और उन्होंने राजसत्ता अपने हाथों में लेते ही इस स्थिति को बदलने का पूरा प्रयास किया। शाहू छत्रपति इस बात को अच्छी तरह जानते थे कि, जिस तरह समाज में और धर्म में ब्राह्मणों के प्रभुत्व को समाप्त करना आसान बात नहीं है उसी प्रकार कोल्हापुर रियासत के शासन-प्रशासन में उनके वर्चस्व को समाप्त करना आसान बात नहीं है। लेकिन शाहू

छत्रपति का सामाजिक परिवर्तन का संकल्प दृढ़ था। उस समय तक महाराष्ट्र के महामानव जोतिबा फुले के कार्यों और विचारों से सामाजिक पृष्ठभूमि तैयार हो चुकी थी। उस समय दलित और पिछड़ी जातियों में सामाजिक, धार्मिक परिवर्तन की प्रक्रिया शुरू हो गयी थी।

जिस दिन शाहू छत्रपति ने कोल्हापुर रियासत की सत्ता को अपने हाथों में लिया उसी दिन दिनांक 2 अप्रैल, 1894 को ही उन्होंने अपनी रियासत की ओर से एक विशेष घोषणापत्र जारी किया और उसमें उन्होंने यह कहा कि, "हमारे प्रजाजन हमेशा सुखी और सन्तुष्ट रहने चाहिए, उनके हित सम्बन्धों की लगातार अभिवृद्धि होती रहे और हमारी रियासत का सभी ओर से उत्थान होता रहे, यही हमारी वास्तविक इच्छा है। हमारे इस उद्देश्य को सफल करने के लिए हमारे जागीरदार, सम्बन्धी, सरदार, अधिकारी, इनामदार, कर्मचारी, सभी स्तर के सेठ, साहूकार और

अन्य प्रजा की उज्ज्वल राजनिष्ठा की और उनके सहयोग की हमें जरूरत है। आज हमारी राजसत्ता के शुरू होने के पहले ही दिन हम उस महान जगत चालक के अनुग्रह के लिए प्रार्थना करते हैं कि हमारी राजसत्ता लम्बे समय बरकरार रहे और सुखद हो।" उनके इस घोषणापत्र में उनकी मानवीय संवेदनाएँ व्यक्त होती हैं। उनकी राज्य की संकल्पना सभी प्रजा की भलाई में, उनके हितों में, सुख में है। और इसी आधार पर उन्होंने कोल्हापुर की रियासत की सत्ता का संचालन भी किया, यह बात उनके 28 साल के शासनकाल के इतिहास से स्पष्ट होती है।

शाहू छत्रपति ने अपनी प्रजा के कल्याण के लिए अपने 28 साल के शासनकाल में कई महत्त्वपूर्ण और सामाजिक दृष्टि से क्रान्तिकारी निर्णय लिये और कानून भी बनवाए हैं। उन्होंने दिनांक 14 अप्रैल, 1894 को एक विशेष राज-आदेश जारी करके जंगलों में शिकार करनेवाले और दौरे पर रहनेवाले अंग्रेज तथा रियासती अधिकारियों पर बहुत ही सख्त प्रतिबन्ध लगाये और उन्होंने उनको यह भी ताकीद दी कि ग्रामीण लोगों से जबरदस्ती से या मुफ्त में चीजें न ली जायें। और कोल्हापुर रियासत में इसका एक अच्छा परिणाम भी दिखाई दिया। उन्होंने अपनी रियासत में तुरन्त बंधुआ प्रथा को समाप्त कर दिया। उन्होंने बाजारों में चलने वाली रिश्वतखोरी और दलाली को रोका। उन्होंने गरीब किसानों की मदद की, उनके जानवरों को चरने के लिए सरकारी जंगलों में सुविधाएँ दीं, उन्होंने अपनी रियासत में सभी वर्गों की शिक्षा पर बल दिया, और उन्होंने स्वतन्त्र शिक्षा विभाग का निर्णय किया। उन्होंने आदिवासी लोगों के कल्याण के लिए पहाड़ी और जंगली इलाकों में विशेष सरकारी उपक्रम शुरू किये। इसलिए उनका कोल्हापुर रियासत की सामान्य प्रजा में सम्मान दिन-ब-दिन बढ़ता ही चला गया। उन्होंने अपने शासनकाल में सामान्यजन और विशिष्टजन इस प्रकार का फर्क कभी नहीं किया। उन्होंने 'वेदोक्त प्रकरण' सन् 1900 में नारायणराव राजोपाध्ये को कुल-पुरोहित पद से हटा दिया था। इसमें उन्होंने ब्राह्मणों की नाराजगी मोल ली या उनके क्रोध की परवाह नहीं की। उस समय विशेषतौर पर पूना से प्रकाशित होनेवाले ब्राह्मणवादी समाचार-पत्रों ने 'वेदोक्त प्रकरण' में शाहू छत्रपति के विरोध में आन्दोलन चलाया, उन्होंने शाहू छत्रपति को बदनाम करने में कोई कसर बाकी नहीं छोड़ी लेकिन वे बिलकुल भी विचलित नहीं हुए।

शाहू छत्रपति ने अपनी रियासत में शिक्षा प्रचार का एक तरह से जन आन्दोलन ही शुरू किया था। शाहू छत्रपति सत्ता में आने से पहले कोल्हापुर रियासत में शिक्षा की स्थिति बहुत ही

अन्यायकारी थी। वे उससे सन्तुष्ट नहीं थे। वहाँ अति अल्पसंख्यक ब्राह्मण समाज को पढ़ने का अधिकार था, वे ही पढ़ते-लिखते थे, बाकी अनपढ़ किसान, खेतिहर मजदूर, दलित थे। यह स्थिति कोई सहज रूप से नहीं बनी थी, बल्कि वह एक ब्राह्मणी व्यवस्था थी। उस समय महात्मा फुले सत्यशोधक समाज के माध्यम से दलितों और बहुजनों में शिक्षा का प्रचार-प्रसार कर रहे थे। छत्रपति शाहू ने अपनी रियासत में सभी समाजों में शिक्षा प्रचार को बढ़ावा दिया। उन्होंने प्राथमिक पाठशालाओं की संख्या बढ़ाई। उन्होंने दलित, बहुजन और गरीब परिवारों के बच्चों के लिए छत्रपति पुरस्कार और बिना शुल्क शिक्षा की सुविधाएँ दीं, पाठ्यक्रम में परिवर्तन कराए, अछूतों के बच्चों के लिए जो स्वतन्त्र स्कूल थे वे उन्होंने बन्द करवाए। सार्वजनिक शिक्षा प्रणाली लागू की। उन्होंने लड़कियों की शिक्षा के लिए विशेष प्रयास किये। उसी प्रकार उन्होंने प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य और निशुल्क करवाया।

महाराज शाहू, अपनी रियासत में शिक्षा प्रसार की दृष्टि से विभिन्न जाति के छात्रों के लिए अलग-अलग छात्रावास बनवाए। सन् 1896 के दरमियान कोल्हापुर के राजाराम कॉलेज के छात्रों के लिए एक छात्रावास शुरू किया गया था। लेकिन उस छात्रावास में गैर-ब्राह्मण छात्रों को प्रवेश न मिलने के कारण उन्होंने गैर-ब्राह्मण छात्रों की सन् 1900 में अपने राजमहल में ही व्यवस्था की थी। इस प्रकार कोल्हापुर रियासत में शिक्षा प्रचार की दृष्टि से उनका कार्य किसी क्रान्तिकारी से कम नहीं था।

शाहू छत्रपति की यह भी एक विशेषता थी कि वे किसी भी प्रकार का भेदभाव, जातिभेद नहीं मानते थे। वे महार, मातंग, कातकरी, बुरुड आदि अछूत जाति के लोगों के साथ बैठकर भोजन करते थे। वे उनके घर का पानी पीते थे। वे सन् 1920 में महार मातंगों के साथ नागपुर आये थे। लोग कहते हैं कि छुआछूत के डर से नागपुर के भोसला राजा लक्ष्मणराव अपना राजमहल छोड़कर जंगल में चले गये थे। नागपुर के लक्ष्मणराव भोसले छुआछूत माननेवाले थे। और यही स्थिति उस समय के सभी राजघरानों की थी। लेकिन शाहू छत्रपति इन सबसे अलग थे। शाहू छत्रपति की यह भी एक विशेषता थी कि वे अछूत समाज के लोगों द्वारा आयोजित कार्यक्रम में विशेष रूप से सम्मिलित होते थे और उनको हर तरह से सहयोग भी करते थे। वे दलितों की सेवा को ही मानवसेवा मानते थे। उन्होंने दिनांक 27 जुलाई, 1918 को जो 'अछूत मुक्ति' का पहला

आदेश जारी किया था वह आधुनिक भारत के इतिहास में बहुत ही महत्त्वपूर्ण था। उन्होंने सन् 1920 में दलितों द्वारा आयोजित माणागांव परिषद् में जो व्याख्यान दिया था उसका दलित मुक्ति आन्दोलन में बड़ा महत्त्व है। उसी प्रकार वे सन् 1920 में नागपुर (महाराष्ट्र) में आयोजित दलित परिषद में भी सम्मिलित हुए थे। इन दोनों परिषदों में डॉ. आम्बेडकर उनके साथ थे।

इस तरह सामाजिक क्रान्ति की दृष्टि से, दलित और बहुजन समाजों को सामाजिक न्याय देने की दृष्टि से शाहू छत्रपति का कार्य बहुत ही क्रान्तिकारी है। उन्होंने अपने 28 साल के शासन काल में सामाजिक न्याय की दृष्टि से जो निर्णय लिये, जो कार्य किये हैं वे वास्तव में क्रान्तिकारी हैं। आज की लोकतान्त्रिक शासन व्यवस्था में काम करनेवाले राजनेताओं के लिए भी प्रेरणा देनेवाले हैं, आदर्श स्वरूप हैं। आज शाहू छत्रपति सम्पूर्ण देश के सामने एक आदर्श के रूप में खड़े हैं।

# मुँह से बकवास करने वाले नेता नहीं चाहिए

आज मेरे प्रिय मित्र आम्बेडकर ने इस सभा का अध्यक्ष स्थान स्वीकार किया है। उनके भाषण का लाभ मुझे मिले इसलिए मैं शिकार से जान-बूझकर यहाँ आया हूँ। मि. आम्बेडकर 'मूकनायक' समाचार-पत्र को प्रकाशित करते हैं और उसमें सभी दलित जातियों के सवालों की चर्चा करते हैं, इसलिए मैं उनको तहेदिल से धन्यवाद देता हूँ।

आज मुझे ऐसा लगता है कि, मुझे अछूत लोगों की हाज़िरी माफ करने की बुद्धि क्यों सूझी इस बात का कारण आप लोगों को इस अवसर पर संक्षेप में ही सही, बताना जरूरी है। हाज़िरी होने के कारण इन गरीब लोगों पर, गाँव मजदूरों पर अन्य अधिकारियों की ओर से बहुत अन्याय होता था। मतलब गाँव-देहातों में बारह आना मजदूरी होने पर भी अनुपस्थिति का डर बताकर उन गरीब लोगों के द्वारा अधिकारी लोग मुफ्त में काम करवा लेते थे और बड़ी मुश्किल से उनके पेट के लिए कुछ थोड़ा-सा दे देते थे।

इस बीसवीं सदी में गुलामी से भयंकर इस प्रकार की गुलामी चल रही है। जिन लोगों को इस प्रकार हाजिरी थी उनको इस तरह अपने नजदीकी रिश्तेदार, सम्बन्धी में से कोई भी बीमार होने पर तुरन्त मिलना आसान बात नहीं थी। कई बार उस तरह की मुलाकात न होकर वे मर भी जाते थे। मैंने स्वयं यह देखा है कि, कई बार छोटे बीमार बच्चों के माता और पिता को समय-बेसमय जोर-जबरदस्ती पकड़कर ले जाने के कारण वे छोटे बच्चे, उनकी तरफ ध्यान देनेवाले कोई नहीं होने के कारण उनके माँ-बाप लौटकर आने पर वे उनको मरे पड़े दिखे हैं। इससे और ज्यादा जुल्म क्या हो सकता है? उसी प्रकार

बलुतेदारों (अछूत) से उच्च जाति के लोग काम करवा लेते थे और उनको उनकी मेहनत का कुछ भी नहीं देते थे इस तरह की भी कई घटनाएँ घटी थीं और जो लोग इस बात की शिकायत करते थे उनको धमकाया जाता था कि, तुझको हाजिरी में डाल दूँगा।

पाटील, कुलकर्णी आदि लोगों के मकान बनाने पर गरीब मराठा, सूर्यवंशी, सोमवंशी (अछूत लोग) आदि रैयत लोगों को धमका करके नियमों से भी ज्यादा व्यर्थ लगान (बलुत) वसूल करने में ये लोग किसी भी प्रकार की शर्म महसूस नहीं करते हैं। यदि गाँव में कहीं चोरी हो गई तो हाजिरी वाले (घुमन्तू जातियाँ) लोगों की बड़ी बुरी हालत होती है। उनके सभी अच्छे-बुरे लोगों को धमकाकर उन पर कई तरह से जुल्म ढाया जाता है। गुनाह का स्वरूप देखा जाय तो मैं अपने अनुभव के आधार पर यह कह सकता हूँ कि, हाजिरी के लोगों से भी अन्य लोगों में ही गुनहगारों की संख्या ज्यादा है। लेकिन गैर-गुनहगार लोगों को हाजिरी लगाकर बेशर्म करने से ही उनमें गुनाह करने की आदत बन जाती है। यही हाजिरी का परिणाम होता था। उनको सम्मान से और प्रतिष्ठा से जीने का अवसर ही कहाँ था?किसी-न-किसी तरह से हाजिरी का कलंक पीछे लगा हुआ था। बेइज्जत हमेशा की बात बन गई थी। फिर वे अच्छी तरह कैसे जी सकते थे? इस तरह हाजिरी के कारण उनके मन पर परिणाम होता था—जब से मैंने हाजिरी प्रथा को समाप्त कर दिया तब से गुनाहों की संख्या कम हो गई है। क्योंकि हर किसी को लगता है कि हम इज्जत से जियें।

बलुतेदारों (अछूत गाँव मजदूर) के झगड़े, आपस में मारपीट बंद हो गई है। पटवारी नियुक्त करने की पद्धति शुरू हुए कोई ज्यादा दिन नहीं हुए हैं फिर भी उसकी वजह से भी गाँव के झगड़े-विवाद और आरोप बहुत कम हो गये हैं, इस बात को मैं अच्छी तरह अनुभव कर रहा हूँ।

लेकिन मैं बेगार टालना (वेठ वरका) कम नहीं कर सका। क्योंकि वे सभी लोग माफ़ी (वतन) के पीछे लग रहे हैं और यह माफ़ी (वतन, पैतृक अधिकार) है कितनी?दो आरा मतलब चार-पाँच हाथ चौड़ी भूमि या एक टोकरी अनाज?इससे किसी का भी पेट

नहीं भरता। लेकिन उस अवस्था में माफ़ी की आशा से गाँव में रहने के लिए मजबूर होना पड़ता है और फिर पेट भरने के लिए चोरी आदि प्रकार के गुनाह करने के अलावा उनके सामने कोई विकल्प नहीं रहता है। इसलिए मैंने सभी बलुतेदारों से और महार आदि वतनदारों से यह अनुरोध किया कि आप लोग इस तरह से छोटे-छोटे वतन और बलुता के पीछे न लगें। उनको पूरी तरह छोड़ दीजिए और विशेषतौर पर मैंने महार लोगों से यह अनुरोध किया कि आप लोग अपनी महार की इनाम स्वरूप जमीन का सामान्य रूप में प्रति व्यक्ति दस एकड़ जमीन हिस्से में आये इस प्रकार का बँटवारा कीजिए और इससे उत्पन्न आप में जो बुजुर्ग होंगे उनकी सलाह से बाँटिये, जैसे—पाटील और सरकारी अधिकारियों के द्वारा होता है। मतलब हर गाँव के लिए केवल आठ महार नौकर इस तरह या सरकारी नौकरों की तरह नियुक्त कीजिए गुलामी प्रथा समाप्त होगी और मैं ऐसे लोगों के लिए नयी सनद देने की व्यवस्था बड़ी खुशी के साथ कर सकता हूँ। यदि इस तरह से हुआ तो अन्य महार लोगों को गाँव में या दूसरे गाँव में जाकर कोई धन्धा करने की स्वतन्त्रता रहेगी। और जो सभी लोग आधा पेट भूखे रहते थे वह नहीं होगा। मेरी इस बात को करवीर के महारों ने स्वीकार कर लिया है और आप सभी लोग उनका अनुकरण करेंगे इस बात की मैं उम्मीद करता हूँ। मेरे प्रिय मित्र आम्बेडकर इस काम में मुझे पूरी मदद करेंगे इस बात की मुझे पूरी आशा है।

इस अवसर पर हमारे प्रसिद्ध बुद्धिमान मि. केशवराव, पिछड़ी जातियों के लिए संघर्ष करनेवाले रावबहादुर बाबू कालीचरण (नंदागवली) आदि लोग उपस्थित होते तो बहुत अच्छा हुआ होता। उसी प्रकार सभी पाटील लोग मुझे इस काम में पूरा सहयोग करेंगे इस बात की मैं उम्मीद करता हूँ। हमारे यहाँ के सुप्रसिद्ध व्यापारी रामभाऊ शिरगांवकर का भी इस काम में पूरा सहयोग मिलेगा इस बात का मुझे पूरा यकीन है।

मैंने हाजिरी को समाप्त कर दिया इसलिए मुझे इस तरह के भी सवाल पूछे गये कि, आज तक की हाजिरी के लोग कम-से-कम अंग्रेजादि की परसीमा में जायेंगे तब उनको उनके बारे में पूर्व सूचना मिलनी चाहिए इस तरह सूचना दिनांक 23 मई, 1919 को

सतारा पुलिस सुपरिंटेंडेंट की ओर से आयी थी। उस पर मैंने बड़ी विनम्रता के साथ दिनांक 4 जून, 1919 को जवाब दिया था। वह इस प्रकार से था कि, जब मैंने हाजिरी को पूरी तरह माफ कर दिया है, तब आपकी इच्छा को सम्मान देना मेरे लिए असम्भव हो गया है। लेकिन गुनहगार लोगों की जानकारी फिर से सवर्ण हो या अछूत हो, बड़ी खुशी से देता रहूँगा। लेकिन जो वास्तव में अच्छी तरह रहनेवाले अछूत लोग हैं, उनको सारी जिन्दगी गुनहगारों की तरह रखने में मेरा मन मुझे इजाजत नहीं दे रहा है। इस तरह हाजिरी समाप्त करने की यह सच्ची कहानी है।

कुछ लोग पटवारी पद्धति के सम्बन्ध में मुझ पर इस तरह का आरोप लगा रहे हैं कि, जब वतनदार (जागीरदार) लोग ही नौकरी में नहीं चाहिए, तो फिर पाटील (पटवारी) भी किसलिए चाहिए? नहीं, वैसी बात नहीं है। पाटील क्यों चाहिए इसकी वजह है, कोई भी अज्ञानी, नासमझ आदमी यह महसूस करेगा कि, गाँव-देहातों में कोई-न-कोई जिम्मेदार इस तरह का कर्मचारी चाहिए और यदि यह जरूरी है, तो वह मेरी राय में पाटील (पटवारी) ही होना चाहिए। वजह यह है कि एक तो वह कुलकर्णी वतनदार (कर्मचारी) की तरह पराया नहीं है। उनका काम (उत्पन्न) राजशाही सनदों का है। उन्होंने गाँव बसाये हैं और दूसरी बात यह कि, जिस जाति के लोग जिस गाँव में ज्यादा संख्या में हैं उसी जाति का पाटील ज्यादातर वहाँ होता है। कुलकर्णियों के (एक सरकारी कर्मचारी) जाति के लोग गाँव में हजारों में से एक भी मिलना मुश्किल है। कुलकर्णी के पीछे उसके ही जाति के अधिकारी, वकील और नौकरदार वर्ग का समर्थन होने के कारण गाँव के सभी लोग उससे डरते हैं जिसकी वजह से गाँव के वास्तविक हितों के काम नहीं हो पाते हैं। उसको जिस अधिकारी वर्ग का समर्थन होता है उनको जो बात पसन्द होगी वही बात प्रयास करके करता है और उन लोगों की भलाई और सुख की बातों की ओर उसका ध्यान होने की वजह से गाँव के गरीब लोगों पर अन्याय करके उस तरह के काम उसको करने पड़ते हैं। लेकिन पाटील की स्थिति उस प्रकार की नहीं है। बल्कि लाइलाज होने पर ही पाटील लोग उस तरह से करते हैं। क्योंकि उनके जाति के लोग गाँव में ज्यादा होने के

कारण उसको उनके हित का ध्यान रखना जरूरी हो जाता है। लेकिन एक गाँव में दो पाटील होने से मतभेद होकर झगड़े होते हैं, और उस तरह के विवाद पैदा करने की स्वार्थी लोगों की आदत होती है। जिस गाँव में एक ही पाटील है वहाँ विवाद का प्रमाण कम होता है। इस बात को हमारे स्थानीय अधिकारी अच्छी तरह जानते हैं।

मैंने अछूत समाज के लिए जो कुछ छोटे-मोटे प्रयास किये हैं उसके बारे में बाबूराव यादव ने एक छोटी किताब बनाकर प्रकाशित की है। उसके लिए मैं उनको धन्यवाद देता हूँ। उसी प्रकार इस काम के लिए सत्यशोधक समाज, आर्यसमाज और अमेरिकी मिशन भी मुझे मदद कर रहे हैं। उनके प्रति भी मैं अपना आभार व्यक्त करता हूँ। लेकिन दुख की बात यह है कि, हमारे पढ़े-लिखे जानकार (ब्राह्मण) वर्ग में से बहुत ही कम लोगों का सहयोग इस काम में मिल रहा है। फिर धीरे-धीरे ही क्यों न हो अपने सभी समाज के लोग इन अभागे लोगों के कल्याण के लिए ज्यादा-से-ज्यादा प्रयास करते रहेंगे इस बात का मुझे भरोसा है।

आज की सभा के अध्यक्ष मि. आम्बेडकर का यह काम मुझे बिलकुल पसन्द नहीं आ रहा है। क्योंकि, महार, मातंग, चमार, ढोर आदि लोग वास्तव में वैश्य जाति के हैं, विशेष रूप से महार लोग पहले महार की धागा बनाकर उसका धन्धा करते थे उनको अछूत किसने बनाया यह बात मेरे समझ में नहीं आ रही है। इस तरह वैश्य का धन्धा छोड़कर दस्यु मतलब नौकर और नौकर का मतलब अछूत (अतिशूद्र) इसलिए आम्बेडकर ने इस तरह का काम क्यों अपनाया है, मेरी समझ में नहीं आ रहा है। फिर भी मैं यहाँ इकट्ठे हुए सभी लोगों से अनुरोध करना चाहता हूँ कि, आज तक हमारा निकृष्ट अवस्था में पहुँचने का कारण, हम अपना सही नेता खोज नहीं पा रहे हैं। मीठी बातें कहकर अपना नाम बड़ा करने के उद्देश्य से हम में से कुछ स्वार्थी लोग अयोग्य नेता का चुनाव करके सामान्य लोगों को गुमराह करते हैं। पशु भी, पंछी भी अपनी जाति का नेता चुनते हैं, पंछियों में कभी चार पाँव वाला नेता नहीं होता है। चार पाँव वालों में कभी भी पंछियों का नेता नहीं होता है। गाय, बैल, भेड़ आदि में चरवाह उनका नेता होता है

जिसकी वजह से अन्त में उनको कसाबखाने में जाना पड़ता है।

जिनके जैसा हजारों में भी एक नहीं है और जो पिछड़े खुद क्षत्रियों को भी (जिन्होंने उनको मुगलों से बचाया और जिनके पूर्वज राम, कृष्ण, सूर्यवंशी, सोमवंशी, क्षत्रिय जिनके देवासन में हैं उनको) शूद्र कहना और उनको तो क्या मैले से भी अछूत मानते हैं और छू जाने पर जो अपने आपकी शुद्धि कर लेते हैं, इस तरह के नेता किस काम के? पश्चिमी देशों में या अन्य किसी भी देश में इस तरह के नेताओं को कोई स्वीकार नहीं करता है।

अपने भाई, बहनों और देशवासियों को पशुओं से भी क्या, गोबर और मैले से भी नीच माननेवाले लोगों से नेता बनने की इच्छा करना बड़ी बेशर्मी की बात है। जब मुझे मुखिया पद मिला उस समय यहाँ गैर-ब्राह्मण एक भी वकील या कर्मचारी नहीं था। लेकिन उनको वकीली पढ़ने का अवसर मिलने के कारण वे जानकार हो गये हैं। उसी अपने व्यवहार से जातिभेद नष्ट करके हम लोगों के साथ इंसान जैसा व्यवहार करनेवाले नेता हमें चाहिए। जबकि मैं आम्बेडकर की आलोचना ही कर रहा हूँ, फिर भी उनकी उदार विचारधारा की प्रशंसा भी करना जरूरी है। आज उनको 'पण्डित (बुद्धिमान)' की उपाधि से सम्मानित करने में क्या आपत्ति है? वे विद्वानों में एक भूषण ही हैं। उनको आर्य समाज, बौद्ध समाज और ईसाई समाज ने बड़ी खुशी से अपने में समा लिया होता। लेकिन वे आप लोगों के कल्याण के लिए उधर नहीं गये। इसके लिए आप लोगों को उनको धन्यवाद देना चाहिए और मैं भी उनको धन्यवाद देता हूँ। अन्त में मैं आम्बेडकर से अनुरोध करता हूँ कि, वह जाने से पहले कृपा करके मेरी रजपूतवाडी के कैम्प पर मेरे साथ भोजन करने के लिए पधारने का कष्ट करें।

**माणगाँव, जिला कोल्हापुर में दिनांक 22 मार्च 1920 को आयोजित महाराष्ट्र के अछूत लोगों की परिषद् में शाहू छत्रपति का भाषण। डॉ. आम्बेडकर इस परिषद् के अध्यक्ष थे।**

**अनुवाद : डॉ. विमलकीर्ति**

*शाहू छत्रपति को एक ऐसे उदार तथा प्रगतिशील राजा के रूप में याद किया जाता है जिन्होंने महाराष्ट्र में सामाजिक परिवर्तन की क्रांतिकारी भूमिका निभाई। 2 अप्रैल 1894 को जब कोल्हापुर रियासत की सत्ता उनके हाथ में आई, उनकी उम्र मात्र बारह साल थी। शाहू छत्रपति ने अपने 28 वर्ष के शासन काल में सामाजिक समानता तथा सांस्कृतिक विकास की दृष्टि से अनेक क्रांतिकारी काम किए, जैसे बँधुआ मजदूरी की प्रथा को समाप्त करना, आदिवासियों पर लागू प्रतिबंधों को हटाना, निजी एवं सार्वजनिक जीवन में सभी प्रकार के भेदभाव को रोकना, जनसाधारण की असुविधाओं को दूर करना आदि। उन्होंने 27 जुलाई 1918 को अछूत मुक्ति का जो पहला आदेश जारी किया, उसका आधुनिक भारत के इतिहास में ऐतिहासिक महत्व है। शिक्षा के प्रसार में उनकी भूमिका विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उन्होंने दलित, बहुजन तथा गरीब बच्चों की पढ़ाई के लिए बहुत-से कदम उठाए और छात्रवृत्तियाँ स्थापित कीं। अछूतों के लिए बनाए गए अलग स्कूलों को समाप्त कर सबके लिए एक जैसी शिक्षा व्यवस्था शुरू करना उनका एक साहसिक निर्णय था। शाहू छत्रपति ने दलितों को राजनीतिक रूप से जाग्रत और संगठित करने की दिशा में भी प्रयास किया।*